नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' में स्त्री पात्र 'अंबिका और मल्लिका' की प्रासंगिकता

रोहित कुमार[1], विवेक कुमार[2]

[1]डीन एवं सहायक प्रोफेसर, परफॉरमिंग एवं फाइन आर्ट्स संकाय, आईसेक्ट विश्वविद्यालय, हजारीबाग (झारखंड) भारत
[2]शोध छात्र, स्कूल ऑफ परफॉर्मिंग एंड विजुअल आर्ट्स, इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विशविद्यालय, (नई दिल्ली) भारत

सारांश

एक सीमित दायरे में ही अपना पूरा जीवन व्यतीत कर देने वाली नारियों के हक में विमर्श और विचार खड़ा करने वाली महिलाओं ने जब–जब कोई कदम उठाया है उन्हें कदम–कदम पर विभिन्न अवरोधों से संघर्ष करना पड़ा है। इन महिलाओं द्वारा किया गया या किया जाने वाला संघर्ष कई स्तरों में दिखाई देता है। प्राथमिक स्तर पर जो सबसे प्राथमिक संघर्ष होता है वह पारिवारिक ही होता है अगर ध्यान दिया जाये तो इसके भी अनेक स्तर दिखाई देते हैं। उसके बाद संघर्ष का यह दायरा आर्थिक और फिर बढ़ते–बढ़ते सामाजिक, राजनितिक, संस्कृति स्तर तक विस्तृत हो जाता है। विश्व इतिहास के साथ–साथ भारतीय इतिहास में भी इस तरह के महिलाओं के संघर्ष को दर्ज किया गया है। इसके अलावा समय–समय पर साहित्यकारों–कलाकारों ने भी अपनी कृतियों में इस तरह के संघर्ष करने वाली काल्पनिक पात्रों का सृजन कर अपनी रचनाओं में स्थान दिया और इस बहाने से अपने समय के समाज को एक यथार्थ दिखाने का प्रयास किया है। कुछ ऐसा ही कार्य हिंदी के प्रसिद्ध कहानीकार–नाटककार मोहन राकेश ने भी अपनी नाट्यकृति 'आषाढ़ का एक दिन' के माध्यम से किया है।

मुख्य बिन्दु – यथार्थ, आधुनिकता, स्त्री, प्रेम, समाज और संघर्ष

I प्रस्तावना

1958 में प्रकाशित मोहन राकेश द्वारा लिखित नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' हिन्दी रंगमंच में सबसे अधिक खेले जाने वाले नाटकों की श्रेणी में आता है। कुछ विद्वानों ने हिन्दी नाटक के विकास में इसे एक मिल का पत्थर माना है। समग्रता में विद्वानों ने इस नाटक को सहज स्वाभाविकता, यथार्थपरक नाटकीयता और काव्यात्मकता का एक संतुलित मिश्रण माना है। आषाढ़ का एक दिन नाटक की कथावस्तु 2सरी शताब्दी ईसा पूर्व से 2सरी शताब्दी बाद के आस पास की है। लेकिन इस नाटक में घटित होने वाली घटनाएँ समसामयिक भी हैं और प्रासांगिक भी। इसको अगर आज के सामाजिक संरचना एवं मान्यताओं को सामने रखकर देखा जाये तो यह नाटक एक साथ कई सार्थक आयाम प्रस्तुत करता हुआ प्रतीत होता है। इसमें एक जगह मल्लिका–कालिदास के रूप में प्रेमी–प्रेमिका के बीच का प्रेम संघर्ष है तो दूसरी तरफ अंबिका द्वारा मल्लिका को समाज द्वारा बनाए गए जीवन के कुछ कड़वे यथार्थ का बोध करवाने का जद्दोजहद भी है। समकालीन समाज में जिस तरह से हर कोई अपने स्तर पर एक संघर्ष से जूझ रहा है ठीक उसी तरह के संघर्ष से जूझते हुए इस नाटक के सभी पात्रों भी को देखा जा सकता है।

अगर दिल्ली जैसे मेट्रो शहरों के कुछ सीमित दायरों को छोड़ दें तो आज भी एक महिला जो चाहें किसी भी समय में हो किसी परिवेश में हो या फिर किसी भी वर्ग से हो उसे उसी के मुताबिक एक संघर्ष तय करना पड़ता है। इस बात को मोहन राकेश ने चार स्त्रियॉं के माध्यम से चार स्तरों पर प्रस्तुत किया है। इस नाटक में उन्होनें अंबिका, मल्लिका, प्रियंगुमंजरी तथा मल्लिका के बेटी के द्वारा बड़े ही तार्किक रूप से महिला संघर्ष के एक बड़े दायरे को यथार्थपरक तरीके से प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

II शोध का उद्देशय

समाज ने स्त्री को हमेशा अपने ही नजरिये से देखा है।

प्रेम कोई दिमाग से करने की चीज नहीं है।

नाटक के पात्र के जरिये समकालीन स्त्रीवादी समालोचना।

नाटक 'आषाढ का एक दिन' में नाट्य साहित्य का विकास करना।

III शोध प्रविधि

स्त्रीवादी विमर्श के अंतर्गत इस शोध विषय को देखने की कोशिश की है। वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक शोध प्रविधि का प्रयोग किया गया है। तथ्यों के लिए प्राथमिक स्रोत के लिये साक्षात्कार और 'विमर्श–विश्लेषण' किया गया है।

IV द्वितीय स्रोत

द्वितीय स्रोत के अंतर्गत संबंधित विषय से पूर्व में किए गए अध्ययन, पत्रिकाएँ, वेबसाइट, अंतरनुशासनिक, सांस्कृतिक अध्ययन और समाजशास्त्रीय अध्ययन किया गया है। मनोविज्ञान के स्केलिंग का भी सहारा लिया गया है।

समाज ने स्त्री को हमेशा अपने ही नजरिये से देखा है। कहा जाता है कि अनुभव इंसान को सब कुछ सीखा देता है। नाटक आषाढ़ का एक दिन में अंबिका का चरित्र बहुत ही व्यावहारिक स्तर पर बुना गया है। अक्सर जब हम स्त्री विमर्श की बात करते हैं तो हमारे सामने सिर्फ दो ही तस्वीर आती है। पहला यह की एक औरत भी नौकरी कर सकती है और दूसरा एक शोषित हो रही बहू। जबकि बात सिर्फ इस सीमित दायरे तक ही नहीं है। इसका दायरा बहुत बड़ा है जिसे हम अपनी दिनचर्या में प्रतिदिन अपने आस–पास ही होते देखते हैं। अक्सर इन चीजों को मामूली तक नहीं समझा जाता है और अनदेखा कर दिया जाता है। इन्हीं अनदेखा कर दी गयी

घटनाओं को मोहन राकेश ने अपने इस नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' में बिना किसी छेड़छाड़ के जस का तस प्रस्तुत कर दिया है। नाटक में अंबिका समाज के उस वृद्ध महिला का प्रतिनिधित्व करती है जो एक समय में चीजों को भावनात्मक दृष्टि से देखती है। धीरे–धीरे जब उसके ऊपर जिम्मेदारी बढ़ने लगती है और तमाम कार्य कलापों को अपने नहीं बल्कि सामाजिक संरचनाओं के मुताबिक करना पड़ता है तब उसे मजबूरन भावनात्मक धरातल से ऊपर उठना ही पड़ता है।

परंपरागत रूप से हमेशा से ऐसा माना जाता रहा है कि महिलाओं का काम सिर्फ खाना बनाना और घर देखने भर का है। जबकि सदियों से महिलाओं ने इस अवधारणा को प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से गलत साबित किया है। बात चाहे इतिहास में मौजूद महिलाओं की करें या फिर किवंदन्तियों की महिलाओं की। कभी कहीं युद्ध हो या फिर किसी तरह की महामारी फैले सबसे अधिक जिम्मेदारी का दायरा अगर किसी के हिस्से में आता है तो वह एक शादीशुदा औरत के। इस तरह के माहौल में बेहद ही सीमित संसाधन में उसे कम से कम अपने घर का माहौल जितना अधिक संभव हो सके सामान्य बनाये रखना पड़ता है। चाहे सीमित खाद्य सामाग्री में ही सबके खाने का इंतजाम करना हो तो सबको खिलाने के बाद ही अंत में वह खाती है या फिर अगर कोई किसी बीमारी की वजह से बिस्तर पर पड़ा हो तो उसके देखभाल की सारी जिम्मेदारी उसी को करनी पड़ती है जैसा की दुनिया भर के समाज में हमेशा यही परंपरा रही है।

पहले ही दृश्य में आकृतियों को देखकर अंबिका आगे किसी तरह की होने वाली संकट को भांप लेती है। वह कहती है– **"जाने क्या कर रहे हैं !...कभी वर्षों में ये आकृतियाँ यहाँ दिखाई देती हैं। और जब भी दिखाई देती हैं, कोई न कोई अनिष्ट होता... जब तुम्हारे पिता की मृत्यु हुई, तब भी मैंने ये आकृतियाँ यहाँ देखी थीं।"** घर से बाहर अपने आस–पास के समाज में हो रही कुछ अस्वाभाविक हलचल को देखकर अंबिका को चिंता होती है कि कहीं कुछ अनहोनी भी हो सकता है। कहना यह गलत नहीं होगा कि अंबिका भी किसी समय में भावनाओं को जीने वाली एक युवती रही होगी। शादी के बाद अपने पति की पत्नी। जिसको कथित रूप से किसी भी तरह की कोई ना कोई चिंता रही होगी और ना किसी तरह की कोई जिम्मेदारी। यहाँ इस जगह पर अंबिका समाज में हो रहे हलचल को देखकर कुछ फिक्रमंद दिखाई देती है– उसकी यह चिंता अपनी बेटी के लिए है। दरअसल उसे चिंतित होना पड़ रहा है जबकि सामाजिक मान्यता के अनुसार इस तरह की किसी चिंता–फिक्र का कार्य एक पुरुष को ही करना होता है या करता है। थोड़ा विश्लेषण करने पर इस तरह की चिंतित–फिक्रमंद अम्बिकाएं आज बड़ी आसानी से हमारे आस–पास दिखाई दे जाती हैं। 'द वायर' वैबसाइट ने कुछ इसी तरह की अम्बिकाओं के संघर्षों की पड़ताल कर उन्हें सामने रखा है। दिल्ली की रहने वाली मधु टांक अपने संघर्षों का जिक्र करते हुए बताती हैं – **"मेरे तीन बच्चे हैं, बड़ी बेटी 21 साल की है, पति ने शराब के लिए बच्चों की पढ़ाई बीच में छुडवा दी थी लेकिन अब मैंने अपने बच्चों का स्कूल में दुबारा दाखिला करा दिया है। अब ज्यादा घरों में काम करने लगी हूँ ताकि बच्चों की अच्छी परवरिश कर सकूँ।"** द वायर ने अपने इसी लेख में मधु की ही तरह सामाजिक अवरोधों से लड़ने वाली सूरत की हर्षिका पांड्या, बागपत की रेखा राणा, केरल की एलिना जोर्ज, और दिल्ली की शन्नो बेगम के संघर्षों को भी सामने रखा है। इन सभी महिलाएं के संघर्षों में कहीं ना कहीं मोहन राकेश द्वारा सृजित अंबिका के संघर्ष की झलक दिखाई दे जाती है जो आज के समाज में अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करते दिखाई देती हैं।

अब इसी अंबिका को जरा एक बार आज के परिप्रेक्ष्य में रखकर विश्लेषित करने की कोशिश कीजिए। मान लीजिए अंबिका एक निम्न मध्यवर्गीय परिवार की एक छोटे से शहर में रहने वाली पारंपरिक संस्कारों वाली पूर्ण रूप से घरेलू स्त्री है जो सामाजिक संरचनाओं का निर्वाह बिना किसी इफ बट के करती है। तथाकथित रूप से तमाम महिलाओं की तरह वह भी सौभाग्यशाली महिलाओं में से ही है। उसे भी किसी तरह की कोई चिंता नहीं है और उसे भी कुछ नहीं करना होता है जैसा कि अब तक सामाजिक मान्यता है। वह भी उन भाग्यशाली महिलाओं की तरह हमेशा घर पर ही रहती है। उसका पति कोई एक सामान्य सा नौकरी कर कमाता है और सभी जिम्मेदारियों को उठाते हुए पारिवारिक और सामाजिक परम्पराओं का निर्वाह करता है। समाज के मुताबिक अंबिका को करना क्या होता है। वह तो बस दो–एक मामूली सा काम कर देती है। मसलन सुबह–सुबह घर में बाकियों से थोड़ा पहले उठ जाती है। क्योंकि मल्लिका अभी छोटी है इसलिए उसे स्कूल भेजने के लिए उसे जरा सा तैयार कर देती है और थोड़ा बहुत लंच बॉक्स बना देती है। हाँ मल्लिका कभी–कभी स्कूल ना जाने के लिए कई तरह के बहाने भी बनाते रहती है इसलिए उसे कुछ एक प्रलोभन देकर स्कूल भेजने लिए राजी करवाती है। उसके पति महोदय अभी सो रहे है और अंबिका बड़े ही संस्कारों वाली भी है इसलिए वह इस बात का भी ख्याल रखती है कि उसके पति के नींद में किसी तरह का कोई अवरोध ना आ जाए। मल्लिका को स्कूल भेजकर वह फटाफट बर्तन–वर्तन धो देती है, थोड़ा बहुत झाड़ू–वाडु भी लगा देती है। जब तक पतिदेव जगकर उठते हैं उसे एक कप चाय ही तो बनाना होता है सो वह भी कर देती है। और इसी तरह के कुछ एक छोटे–मोटे काम को सम्पन्न कर उनको भी ऑफिस भेज देती है। अब से अंबिका के पास कोई किसी भी तरह का कोई काम नहीं रह गया है दो एक हल्के से काम को छोड़ दें तो। इसलिए वह दिन भर घर पर बैठी आराम करेगी। दोपहर हो चुका है और अंबिका कपड़े धो रही है इतने में मल्लिका भी स्कूल से घर आ जाती है। कपड़े–वपड़े धो लेने के बाद अब वह मल्लिका के साथ बैठती है। कल के होम वर्क अभी पूरे नहीं हुए हैं इसलिए शाम को ट्यूशन वाले सर के आने से पहले वह उसका होम वर्क पूरा करवाती है। होम वर्क की बहुत सी बातें अंबिका के समझ में नहीं आती है जिसे समझने के लिए उसे मल्लिका की किताबों को पढ़ना पड़ता है। अब जाकर उसे थोड़ा आराम मिला। शाम को जब सर पढ़ाने आए तो अंबिका ने चुपचाप सिर झुकाकर एक कप चाय सर के पास रख दिया। चाय देकर वह उस कमरे से जहां मल्लिका बैठी सर के साथ पढ़ाई कर रही है, चली जरूर गई है। लेकिन वह रूम के बाहर एक आड़ लेकर चुपचाप बैठी सर की बात को सुन रही है। कहीं ना कहीं उसके मन में मल्लिका को लेकर थोड़ी बहुत असुरक्षा की भावना है जिसे वह प्रकट

नहीं करती क्योंकि बात यहाँ संस्कारों की जो है। कल को कहीं कुछ उंच नीच हो गया तो? सर के चले जाने के बाद अब वह रात के खाने की तैयारी में लग जाती है। रात को वह मल्लिका को खाना खिला ही रही होती है की कुछ देर में उसके पति भी आ जाते हैं। सबको खाना खिलाकर ही वह अंत में खाती है। कुछ इसी तरह रूटीन में उसका सारा दिन एक एक करके गुजरता है।

अब जरा सोचिए इस तरह की संस्कारी, घरेलू महिला अंबिका के जीवन की क्या दशा हुई होगी जब एक दिन अचानक उसके पति का देहांत हुआ होगा ? मोहन राकेश की अंबिका का जीवन बिलकुल यहीं से शुरू होता है। क्या हुआ होगा उस मल्लिका के साथ जिसकी पहचान तक भी उसके पति के बगौर कुछ नहीं। उसे कितनी यंत्रणाओं से गुजरना पड़ा होगा। पति के देहांत के बाद जब पहली बार वह घर से बाहर निकली होगी। उस समाज ने उसके ऊपर कितने लांछन लगाए होंगे जब पहली बार उसने किसी गैरपुरुष से किसी प्रकार की सहायता ली होगी।

मोहन राकेश ने अपने नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' में अंबिका को एक पूर्ण रूप से प्रैक्टिकल इंसान को प्रस्तुत किया है। जिसके पास पारिवारिक और सामाजिक दोनों तरह के अनुभव हैं। अंबिका अब भावनाओं से कहीं ऊपर उठ चुकी है। नाटक में एक जगह मल्लिका कहती है– **"मैं जानती हूँ माँ, अपवाद होता है। तुम्हारे दुःख की बात भी जानती हूँ। फिर भी मुझे अपराध का अनुभव नहीं होता। मैंने भावना में एक भाव का वरण किया है। मेरे लिए वह संबंध और सब संबंधों से बड़ा है। मैं वास्तव में अपनी भावना से प्रेम करती हूँ जो पवित्र है, कोमल है, अनश्वर है।"** अंबिका कितना व्यावहारिक हो चुकी है इस बात को उसके जवाब से समझा जा सकता है। वह कहती है– **"तुम जिसे भावना कहती हो वह केवल छलना और आत्म–प्रवंचना है। भावना में भाव का वरण किया है !...मैं पूछती हूँ भावना में भाव का वरण क्या होता है ? उससे जीवन की आवश्यकताएँ किस तरह पूरी होती हैं ?...भावना में भाव का वरण ! हँ।"** अंबिका को पता है कि जिस समाज में वह रहती है वहाँ किसी भी तरह के इमोशन का कोई स्थान नहीं होता है। जीवन की भौतिक जरूरतों को पूरा करने के लिए सिर्फ भाव–भावना से कुछ नहीं होगा। इस बात को आज के सन्दर्भ में समझने के लिए एक बार पुनः द वायर द्वारा कवर की स्टोरी को देखा जा सकता है। फूड डिलीवरी का काम करने वाली सूरत की हर्षिका अपने प्रति समाज के नजरिए के बारे में बताती हैं और कहती हैं– **"मुझे याद है जब मेरे आस–पड़ोस के लोगों को पता चला था कि मैं घर–घर जाकर खाना डिलीवर करने का काम करती हूँ तो वे मुझे भौहें चढ़ाकर देखते थे। मेरे बारे में कानाफूसी होती थी। मेरे घर पर आकर लोग मेरी माँ को ताने मारकर जाते थे। यहाँ तक बोला जाता था कि मैं धंधा करती हूँ इसलिए देर रात एक बजे तक घर आती है।"** एक दूसरा उदाहरण मधु टांक का भी देखा जा सकता है। मधु कहती हैंदृ **"मैं रोज सुबह अँधेरे में ही काम के लिए निकलती हूँ और अँधेरा होने पर ही घर पहुचती हूँ। आस–पड़ोस के लोग बातें तो बनाते हैं लेकिन किसी को मेरा संघर्ष नजर नहीं आता।"**

ऐसा भी नहीं है अंबिका भावनाओं को नहीं समझती है अगर कभी ऐसा होता तो वह निश्चित ही कभी ना कभी ना मल्लिका को कालिदास के साथ बाहर जाने से रोकने के लिए बल का प्रयोग करती है। दरअसल जीवन के अनुभवों ने उसे सावधान कर दिया है। उसने अपने समाज का महिलाओं के प्रति रखने वाले व्यवहार को महसूस किया है और वह नहीं चाहती की मल्लिका को भी कभी इस तरह के अनुभव से कभी दो चार होना पड़े। कालिदास के संबंध में वह मल्लिका से कहती भी है– **"ग्राम के अन्य लोग उसे उतना नहीं जानते जितना मैं जानती हूँ।"** एक और जगह वह मल्लिका के एक सवाल के जवाब में कहती है **"मेरी वह अवस्था बीत चुकी है जब यथार्थ से आँखें मूँद कर जिया जाता है।"** अंबिका के सामाजिक संघर्ष से आज की भी महिलाओं को भी दो चार होना ही पड़ता है। नाम और सुरत जरूर बदल जाते हैं।

मल्लिका का कालिदास से सिर्फ प्रेम करने में अंबिका को कोई एतराज नहीं है। लेकिन उसको इस बात का भी आभास है कि आज कालिदास जिस तरह से पूरे गाँव वालों के सामने मल्लिका से अपने प्रेम को प्रकट करता रहता है कल जब विवाह करने का समय होगा वह पीछे मुकर जाएगा। वह कहती भी है– **"वह व्यक्ति आत्म–सीमित है। संसार में अपने सिवा उसे और किसी से मोह नहीं है।"**

अंबिका भलीभाँति जानती है कि कालिदास का तो कुछ भी नुकसान नहीं होगा लेकिन मल्लिका को अपने चरित्र की परीक्षा जरूर देनी होगी। क्योंकि आज भी चरित्र का हनन तो सिर्फ औरतों का ही होता है। इस संदर्भ में महादेवी वर्मा ने 1933 में अपने एक लेख में लिखा है –**"अग्नि में बैठकर अपने आपको पतिप्राणा प्रमाणित करने वाली स्फटिक सी स्वच्छ सीता में नारी की अनंत युगों की वेतना साकार हो गई है।"**

दरअसल मोहन राकेश ने बड़े ही सूक्ष्म तरीके से समाज में मौजूद उस पात्र को अंबिका में आरोपित किया है जिसके अंदर समाज में मौजूद दोहरा चरित्र रखने वाले इंसान को समझ सकने की दृष्टि है। क्या आज भी हमारे आस–पास प्रेम के नाम पर छलावा करने वाले इंसान नहीं हैं? अपने साथी का प्रयोग अपने अंदर की रिक्तता को भरने के लिए करते हैं? अगर आज के शब्दों में कहें तो "टाइम पास करने के लिए ?" यही बात अंबिका मल्लिका से कहती है। **"मैं ऐसे व्यक्ति को अच्छी तरह से जानती हूँ। तुम्हारे साथ उसका इतना ही संबंध है कि तुम एक उपादान हो जिसके आश्रय से वह अपने से प्रेम कर सकता है। अपने पर गर्व कर सकता है।"**

प्रेम कोई दिमाग से करने की चीज नहीं है– मोहन राकेश ने अपने इस नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' में मल्लिका के माध्यम से प्रेम के एक पारंपरिक आदर्श रूप को प्रस्तुत किया है। मल्लिका निस्वार्थ भाव से कालिदास से प्रेम करती है। उसके प्रेम करने का आलम यह कि वह कालिदास को उज्जयिनी भेजती है। क्योंकि वह उससे प्रेम करती है और यह स्वाभाविक भी है कि हम जिससे प्रेम करते हैं उसकी तरक्की भी चाहते हैं। जो मल्लिका में भी दिखाई देता है। जैसा कि ऊपर भी उल्लेख भी किया गया है कि मोहन राकेश ने नाटक की घटनाओं को बिलकुल यथार्थ रूप से पेश किया है। उन्होनें मल्लिका के माध्यम से आज की उन महिलाओं को प्रस्तुत

किया है जो प्रेमी के लगातार तिरस्कार के बावजूद लगातार उसका इंतजार करती रहती हैं।

अब एक बार मोहन राकेश की मल्लिका को आज के संदर्भ में रखकर देखते हैं। मान लीजिए आज की मल्लिका किसी छोटे गाँव–शहर से दिल्ली जैसे किसी बड़े शहर में पढ़ाई करने आती है। उसके साथ लड़के भी पढ़ाई करते हैं। जिसमें आज के कालिदास से उसे और उससे कालिदास को प्रेम हो जाता है। मल्लिका को कालिदास से सच्चा वाला प्रेम हो जाता है और शायद कालिदास को भी शायद इसलिए क्योंकि उसने मल्लिका को कभी नहीं कहा है कि वह उससे विवाह करेगा वो अलग बात है कि उसे मल्लिका को किसी अन्य लड़के के साथ देखना भी गवारा नहीं। कालिदास तो टॉपर भी है और बहुत ही महत्वाकांक्षी भी। वहीं दूसरी तरफ मल्लिका है जिससे और भी लड़के आकर्षित हैं प्रेम करते हैं लेकिन उसे तो सिर्फ कालिदास और कालिदास को मल्लिका ही पसंद है। एक दिन पता चलता है कि कालिदास को किसी दूसरे शहर में एक अच्छी नौकरी लग जाती है। मल्लिका उससे कहती है तुम जाओ नौकरी करो। उधर कालिदास नौकरी करने चला जाता है और इधर मल्लिका दिन–रात कालिदास के इंतजार में वक्त काटती रहती है। एक दिन मल्लिका को पता चलता है कि कालिदास को अपने साथ काम करने वाली किसी अन्य लड़की से प्रेम हो गया है और वह उससे शादी करने की भी चाहत रखता है। इधर मल्लिका जब भी कालिदास से फोन पर बात करने की कोशिश करती है वह उससे कभी सीधे मुंह बात भी नहीं करता। हाँ कभी– कभार उल्टे उसके ऊपर कई तरह के दोष जरूर मढ़ देता है। इन सबके बावजूद मल्लिका कालिदास का इंताजर करती रहती है। उसे अपने प्रेम की ताकत पर पूरा विश्वास है कि एक दिन वह लौटकर जरूर आएगा। मोहन राकेश ने मल्लिका को कितना समसामयिक और यथार्थ रूप से प्रस्तुत किया है। देखने पर हमें आज भी हमारे आस–पास कई मल्लिकाएं दिख जाएंगी।

नाटक आषाढ़ का एक दिन में मल्लिका को पता है कि कालिदास ने शादी कर लिया है बावजूद इसके वह कालिदास से ना तो प्रेम करना छोड़ती है और ना ही उसका इंतजार। निक्षेप जब मल्लिका से कालिदास के स्वार्थलोलुपता की बात करता है तब मल्लिका कहती है– **"और मुझे प्रसन्नता है कि वे वहाँ रह कर इतने व्यस्त हैं। यहाँ उन्होंने केवल 'ऋतु–संहार' की रचना की थी। वहाँ उन्होंने कई नए काव्यों की रचना की है। दो वर्ष पहले जो व्यवसायी आए थे, उन्होंने 'कुमारसंभव' और 'मेघदूत' की प्रतियाँ मुझे ला दी थीं। बता रहे थे उनके एक और बड़े काव्य की बहुत चर्चा है परंतु उसकी प्रति उन्हें नहीं मिल पाई।"**

नाटक के अंत तक एक तरफ मल्लिका अपने जीवन में भौतिक सुख की जगह भावनात्मक सुख को स्थान देती है तो वहीं दूसरी ओर कालिदास के रूप में एक स्वार्थी इंसान भी दिखाई देता है। जब कालिदास अपनी पत्नी और भौतिक सुख का त्याग कर भावनात्मक सुख के लिए दुबारा वापस मल्लिका के पास आता है तब भी मल्लिका का कालिदास के लिए इंतजार दिखाई दे जाता है। कालिदास एक बार पुनः जब वापिस जाता है तब मल्लिका भी उसके पीछे जाने के लिए पाँव बढ़ाती है लेकिन अपनी बच्ची को बाहों में देखकर वह रुक जातीहै।

V निष्कर्ष

मोहन राकेश ने शायद नाटक को यथार्थ के बेहद करीब ले जाने के लिए ही अंबिका और मल्लिका के चरित्र को जस का तस प्रस्तुत किया है। इस नाटक से शायद वास्तविकता दिखाना चाह रहे हों तभी तो उन्होनें ना ही अंबिका को तमाम संघर्षों के बाद सफलता हासिल करते दिखाया और ना ही मल्लिका को। हो सकता है कि उनकी सोच दर्शकों को सोचने पर मजबूर करना रहा हो। दर्शक दीर्घा में बैठा इंसान जब मंच पर अपने आस–पास की घटनाओं को घटित होते देखता है तब उसे इस बात का एहसास होता है कि जो हो रहा है उनमें क्या सही है और क्या गलत। इस तरह यह देखा जा सकता है कि आषाढ़ का एक दिन की अंबिका और मल्लिका आज भी हमारे आस–पास समाज से संघर्ष करती हुई दिखाई दे जाती हैं।

संदर्भ सूची

[1] राकेश, मोहन. (2008). आषाढ़ का एक दिन .कश्मीरी गेट दिल्ली, राजपाल एंड संस.पृ.12–13

[2] http://thewirehindi.com/74073/stories-of-woman-workers-india-society-womens-day/4/3/2022 11:55:21 PM

[3] राकेश, मोहन. (2008). आषाढ़ का एक दिन .कश्मीरी गेट दिल्ली, राजपाल एंड संस.पृ. 14–15

[4] राकेश, मोहन. (2008). आषाढ़ का एक दिन .कश्मीरी गेट दिल्ली, राजपाल एंड संस.पृ.15

[5] http://thewirehindi.com/74073/stories-of-woman-workers-india-society-womens-day/ 4/3/2022 11:55:21 PM

[6] http://thewirehindi.com/74073/stories-of-woman-workers-india-society-womens-day/ 4/3/2022 11:55:21 PM

[7] राकेश, मोहन. (2008). आषाढ़ का एक दिन .कश्मीरी गेट दिल्ली, राजपाल एंड संस.पृ. 15

[8] राकेश, मोहन. (2008). आषाढ़ का एक दिन .कश्मीरी गेट दिल्ली, राजपाल एंड संस.पृ. 25

[9] राकेश, मोहन. (2008). आषाढ़ का एक दिन .कश्मीरी गेट दिल्ली, राजपाल एंड संस.पृ. 25

[10] https://hindi.feminisminindia.com/2017/03/05/mahadevi-varma-essay-hindi/ 3/3/202011:18 AM

[11] राकेश, मोहन. (2008). आषाढ़ का एक दिन .कश्मीरी गेट दिल्ली, राजपाल एंड संस.पृ. 26

[12] राकेश, मोहन. (2008). आषाढ़ का एक दिन .कश्मीरी गेट दिल्ली, राजपाल एंड संस.पृ. 52